P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-8* (Part-1) April- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

बाबा साहब का मूलमंत्र – 'शिक्षित बनो, संगठित रहो

प्रीतम सिंह
हिंदी प्राध्यापक
शिक्षा विभाग
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक
विद्यालय, कनीपला
कुरुक्षेत्र, हरियाणा, भारत

सारांश

जातिवाद के विरुद्ध संघर्ष भी उतना ही पुराना है जितना पुराना जातिवाद स्वयं है। आधुनिक काल में जातिवाद के विरुद्ध संघर्ष को एक नयी दिशा देने वाले महामानव थे बाबा साहब अंबेडकर, उन्होंने जाति व्यवस्था का अध्ययन किया और विश्लेषण किया कि आज तक जाति के विरुद्ध संघर्ष निष्प्रभावी ही क्यूँ रहे। जाति व्यवस्था का अध्ययन करने के पश्चात उन्होंने मंत्र दिया "शिक्षित बनों, संगठित रहो" बाबा साहब के इस मंत्र से दलितों में एक नयी जाग्रति आई और उन्होंने शिक्षा पर ध्यान देना आरम्भ किया। इस चेतना की वजह से दलितों के जीवन में परिवर्तन आरम्भ हुआ और यह परिवर्तन आज समाज में सर्वत्र दिखाई पड़ता है। यह शोध पत्र बाबा साहब के इस मूल मंत्र के दलित साहित्य के उद्‌गम और उनके विचारों के प्रभाव की विवेचना है।

मुख्य शब्द : आंबेडकर. दलित, जाति, शिक्षा।

प्रस्तावना

भारत में जातिवाद जितना पुराना है, उतना ही पुराना उसके विरुद्ध संघर्ष भी है। भारतवर्ष में जातिवाद के विरुद्ध संघर्ष का बीड़ा कई महापुरुषों ने उठाया और इसकी वजह से कई नये पंथों की स्थापना भी हुई। जातिवाद को मात्र एक संस्था नहीं समझा जाना चाहिये अपितु यह एक ऐसा आधारभूत ढांचा है जिसकी नींव में एक मानव का दूसरे मानव द्वारा शोषण किया जाना है। पुरातन काल में एक ऐसा ढांचा खड़ा किया गया जिसके तहत एक जाति को निकृष्ट घोषित कर दिया गया और उसी अनुरूप उसके लिए रोजगार भी तय कर दिये गए। प्रारम्भ में इस ढांचे का मूलरूप कुछ अन्य था। समाज के इस मूलरूप ढांचे को भद्रनायक उपनिषद का यह श्लोक अधिक स्पष्ट करता है :

ऊँ असतो मा सद्‌गमय
तमसो मा ज्योर्तिगमय
मृत्योंमामृतम् गमय
ऊँ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

(www.greenmemory.com)

उपर्युक्त श्लोक से यह स्पष्ट है कि ''अन्धकार से प्रकाश की ओर'' भारतीय संस्कृति और सभ्यता का मूल मंत्र रहा है। जब अंधकार की बात होती है तो यह अज्ञान का अंधकार है, जिससे बाहर निकलना प्रत्येक मनुष्य का धर्म है और कर्तव्य भी। यह अंधकार सभी मानवों के हृदय में व्याप्त है और इस अंधकार को दूर करने का सामर्थ्य केवल ज्ञान में ही है। भारतीय संस्कृति और सभ्यता में प्रत्येक मनुष्य को सत्य खोजने के लिए उपर्युक्त ज्ञान अर्जित करना वर्जित नहीं था।

अध्ययन का उद्देश्य

बाबा साहब आंबेडकर एक ऐसे महामानव थे जिन्होंने विपरीत परिस्थितियों में रहते हुए न केवल स्वयं संघर्ष किया अपितु अपने जैसे असंख्य लोगो को भी संघर्ष के लिए प्रेरित किया। उन्होंने अपने विचारो को पुस्तकों, उद्‌बोधनों और निबंधो के माध्यम से आम लोगों तक पहुँचाया और उनके इन्ही विचारों ने दबे कुचले लोगो को प्रेरणा दी की वे संघर्ष करें और अपने इसी जीवन में सम्मान प्राप्त करें यह शोध पत्र उनके उन विचारों की विवेचना करता है, जिनसे आम जन मानस के विचारों में परिवर्तन आया।

वामसी जुलुरी अपनी पुस्तक 'रीआर्मीग हिन्दुईज़म' में कहते हैं कि भारतीयों ने एक ऐसी सभ्यता का निर्माण किया जिसमें प्रातःकाल की प्रार्थना अच्छे शिकार के लिये, शत्रुओं पर विजय प्राप्ति के लिए अथवा किसी मनघड़ंत स्वर्ग के लिए नहीं की जाती थी। प्रातःकालीन प्रार्थना का एक ही मंतव्य था – ज्ञान प्राप्ति। प्रातःकालीन इस प्रार्थना में कहा जाता था :

हे सूर्यदेवता आप की जीवन दायिनी किरणें मेरी
बुद्धि को भी जागृत करें।
आपकी जीवन–दायिनी किरणे मेरी बुद्धि को
जागृत करें ताकि मैं आपको महसूस कर सकूँ।
और आपको महसूस करके उस परमानन्द की अनुभूति
कर सकूँ जिसका स्रोत केवल आप हैं।
और मैं यह ज्ञान प्राप्त कर सकूँ कि केवल आप ही हैं।
(जुलुरी 5)

हिन्दुओं द्वारा पढ़े जाने वाले और गाये जाने वाले गायत्री मन्त्र का सार भी ज्ञान ही है।

परन्तु बाहरी आक्रमणों के कारण यह ज्ञान विस्मृत हो गया और जिस कारण एक ऐसी संरचना खड़ी हो गई जिसमें मानव को ही मानव से दूर कर दिया गया। भारतीय सभ्यता का मूलमन्त्र – ''प्रत्येक मानव दिव्य है'' भुला दिया गया और मानव का ही मानव द्वारा शोषण किया जाने लगा। मानव द्वारा मानव को शोषित किये जाने को एक धार्मिक कर्तव्य बताने के लिए उसे कुछ स्मृतियों में डाल दिया गया और श्रुति ग्रन्थों में बताई गई सभी बातों को छुपा दिया गया। इस सबका परिणाम यह हुआ कि एक ऐसा दोषपूर्ण ढांचा जिसके दमन चक्र में फंसी हुई मानवता आज भी कराह रही है। पोर्टर इस दोषपूर्ण सामाजिक ढांचे के बारे में लिखते हैं :–

> जातिवाद दर्शाता है सबसे स्मरणीय सम्पूर्ण और सबसे सफल प्रयत्न की जो एक वर्ग ने दूसरे वर्ग को शोषण करने के लिए किया। इसके अधिनियमन ने मानवता की एकता को जीर्ण–शीर्ण कर दिया और वो भी इस प्रकार से कि सभी मानव पुनः एक सूत्र में न बन्ध पाये। इसने मानवों के बीच में कभी न लांघे जा सकने वाले अवरोध खड़े कर दिये। मानवों की उपजीविका, उनकी अभिरुचियाँ, उनकी संगति और उनकी अभिलाषायें पूर्वनिर्धारित कर दीं। मानव जैसा जन्मा था, वह वैसा ही रहे। मानव के भविष्य का पूर्वनिर्धारण कर दिया गया, उनका मृत्यु उपरान्त स्थान भी पूर्व निर्धारित कर दिया गया। (825)

बीसवीं शताब्दी में इस संरचना के विरुद्ध सबसे सशक्त संघर्ष महामानव डॉ. भीम राव अम्बेडकर ने किया। उन्हें महामानव कहना सर्वथा उचित है क्योंकि उन्होंने समाज की रूढ़ियों को तोड़ कर, उनके विरुद्ध संघर्ष किया और स्वयं को शिक्षित किया। उन्होंने जातिवाद की संरचना का गहन अध्ययन किया और अपने लेखों के माध्यम से सपृश्य हिन्दुओं और अस्पृश्य हिन्दुओं को जागृत किया। बाबा साहब अम्बेडकर ने पाया कि जातिवाद के विरुद्ध सबसे सशक्त हथियार शिक्षा ही है। दलित साहित्य का उद्‌भव भी बाबा साहब अम्बेडकर के विचारों में ही मिलता है। बाबा साहब का मूलमन्त्र था – शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो। बाबा साहब का मूलमन्त्र शिक्षित बनो सबसे मुख्य है क्योंकि पूर्वकाल में शिक्षा सबके लिए उपलब्ध नहीं थी। इसी कारण से समाज का एक बड़ा हिस्सा अशिक्षित रह गया और पिछड़ गया। बाबा साहब ने अपने जीवन से दर्शाया कि शिक्षा से परिवर्तन संभव है। उन्होंने बताया कि किसी भी व्यक्ति के लिए शिक्षा से समाज में प्रतिष्ठा और सम्मान पाना संभव है।

बाबा साहब का मूल मन्त्र 'शिक्षित बनो, संगठित रहो' ही दलित साहित्य के लिए प्राणवायु है। किसी कवि ने ठीक ही कहा है–

अंधकार है वहाँ आदित्य नहीं है,
मुर्दा हैं वह देश जहाँ साहित्य नहीं है।

ऊपर लिखित पंक्तियों में यदि 'देश' के स्थान पर 'समाज' कर दिया जाये तब भी यह पंक्तियाँ तर्कसंगत ही रहेंगी।

यही बात दलित समाज के बारे में भी सत्य है। बाबा साहब से पूर्व दलित समाज सुसुप्तावस्था में था, जागृति विहिन था। बाबा साहब ने अपने संघर्ष से इस समाज को झिंझोड़ कर रख दिया और यह एहसास करवाया कि वह समाज अभी जीवित है। उन्होंने समाज को विश्वास दिलाया कि अभी भी परिवर्तन संभव है – समाज की दशा में भी और समुचित हिन्दू समाज के दृष्टिकोण में भी।

बाबा साहब के इसी विश्वास का, संघर्ष का और इसी जागृति का परिणाम है : दलित साहित्य।

दलित साहित्य तभी संभव हो पाया जब समाज में शिक्षा की ज्योति जली। समाज शिक्षित हुआ तभी समाज को एहसास हुआ कि शोषण के इस दमन चक्र से निकला जा सकता है, स्वतन्त्रता की हवा में सांस लिया जा सकता है और मनुष्य के भाग्य का निर्धारण उसका जन्म नहीं कर सकता। मनुष्य का जन्म जीव वैज्ञानिक दुर्घटना मात्र है और दुर्घटना किसी भी मानव के सम्पूर्ण जीवन को निर्धारित नहीं कर सकती। बाबा साहब के जीवन से यह दृष्टिगोचर होता है कि उन्होंने महार जाति में जन्म लेने के बाद भी समाज द्वारा निर्धारित आजीविका को न अपनाते हुए बल्कि सभी प्रकार के जातीय विरोध होने के बाद भी उन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त करते हुए, एक उच्च कोटि के शिक्षाविद् व प्रसिद्ध बैरिस्टर बने। उन्होंने अपने ज्ञान से स्वतन्त्रता पूर्व और स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय राजनीति पर अपनी अमिट छाप छोड़ते हुए करोड़ों हिन्दुओं को प्रेरित किया।

बाबा साहब सम्पूर्ण समाज के लिए एक प्रेरणा पुंज बने। विशेषकर वे अस्पृश्य हिन्दुओं के आराध्य बन गए। आज सम्पूर्ण दलित साहित्य उनके विचारों से प्रकाशित हो रहा है। दलित साहित्य मात्र साहित्य नहीं है अपितु यह समाज परिवर्तन का एक सशक्त माध्यम है। दलित साहित्य दोहरा काम करता है – पहला काम समाज को शिक्षित करने की प्रेरणा लेना और दूसरा समाज में संगठन का भाव भरना। दलित साहित्य समाज के सभी वर्गों द्वारा पढ़ा जाता है।

समाज के दूसरे हिस्सों में दलितों की कई तरह की रूढ़िवादी मानसिकता के चित्र आज भी हैं। इन मानसिक चित्रों के अनुसार दलित कामचोर व लोभी होते हैं (सिन्हा 45)।

इसके अतिरिक्त और भी कई ऐसे मानसिक चित्र हैं जो दलित समुदाय के लिए प्रचलित हैं। समाज में

दलितों का मूल्यांकन उनके क्रिया कलापों के अनुसार होने के स्थान पर उन रूढ़िवादी चित्रों के अनुसार होता है जो कि समाज में सदियों से व्याप्त हैं। जिस कारण सामाजिक अन्याय का कारण बने। दलित साहित्य इन रूढ़िवादी मानसिक चित्रों पर प्रहार करता है तथा साथ ही साथ यह पाठकों के अचेतन मन को प्रभावित भी करता है। दलित साहित्य के इस उपक्रम से समाज में फैला भेदभाव दूर होता है तथा समाज में व्याप्त मानसिक रूढ़ियाँ नष्ट होती हैं जिससे एक सुदृढ़ और समरस समाज का निर्माण करने में सहायता मिलती है। बाबा साहब ने अपनी रचनाओं और विचारों के माध्यम से समाज की चातुर्वर्ण्य व्यवस्था को अस्वीकार करते हुए लिखा :

> आधुनिक विज्ञान ने दर्शाया है कि कुछ व्यक्तियों को एक समूह में बांध देना मानवता का एक सतही अवलोकन है जिस पर गंभीरता से विचार नहीं किया जाना चाहिये। साथ ही साथ इस सामूहिकरण से व्यक्तियों की प्रतिभाओं का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता क्योंकि सभी व्यक्तियों की प्रतिभाओं में बहुत सी भिन्नताएं हैं। प्लैटो की लिखी किताब रिपब्लिक की तरह चतुर्वर्ण भी असफल हो जाता है क्योंकि व्यक्तियों को इस तरह से विभाजित नहीं किया जा सकता। (एनाहिलेशन ऑफ कास्ट 267)

ऊपरलिखित पंक्तियों में बाबा साहब जन्म पर आधारित इस वर्ण व्यवस्था को नकारते हुए इसमें व्याप्त कमियों को दर्शाते हैं। आधुनिक विज्ञान भी यही दर्शाता है कि किसी भी व्यक्ति की प्रतिभा का मूल्यांकन उसके जन्म के आधार पर नहीं किया जा सकता, जबकि समाज ने ऐसा करके कुछ ऐसी प्रतिभाओं का दमन किया है जो समाज की दशा और दिशा परिवर्तित कर सकते थे। चतुर्वर्ण व्यवस्था का अर्थ है कि व्यक्ति केवल उसी माध्यम से अपनी आजीविका का उपार्जन कर सकता है जिस माध्यम से उसके पूर्वज विशेषकर उसके पिता करते आये हैं। इसका अर्थ यह है कि यदि एक विलक्षण प्रतिभा का बालक एक मजदूर के घर में जन्म लेता है तो उसे अपनी विलक्षण प्रतिभा का दमन करके उसे मजदूरी ही करनी पड़ेगी। इस व्यवस्था का सबसे बड़ा नुकसान समाज को ही होता है क्योंकि समाज ऐसी विलक्षण प्रतिभाओं की सेवाओं से वंचित रह जाता है। समाज में ऐसी व्यवस्था का कोई स्थान नहीं होना चाहिये जो समाज की अवनति का कारण बने।

शिक्षा ऐसी व्यवस्थाओं के प्रति समाज को जागृत करती है और ऐसे दमन चक्रों से समाज को स्वतन्त्र करने का कार्य करती हैं। इस साहित्य में दलित जीवन भी दृष्टिगोचर होता है। दलित साहित्य में दलित जीवन का प्रयोग सबसे पहले बाबा साहब के सहयोगियों ने ही किया:

> डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर के साथ काम करने वाले अण्णाभाऊ साठे, शंकर राव खरान और बंधुमाधव जैसे कहानीकारों ने अपनी सशक्त कहानियों से सिद्ध किया है कि दलित जीवन भी साहित्य का विषय हो सकता है। बाद में एक महत्त्वपूर्ण नाम आता है – बाबूराव बागुल। अण्णाभाऊ साठे की कहानियों में दलितों की द्ररिद्रता, भूख और उनका संघर्ष चित्रित हैं। बंधुमाधव की कहानी सामाजिक परिवर्तन की अपेक्षा करती है। शंकरराव खरान की कहानियों में दलितों पर होने वाले अन्याय, अत्याचार का चित्रण हुआ है साथ ही दरिद्रता, अंधश्रद्धा, परम्परा, रूढ़ि आदि के फलस्वरूप होने वाले दुःखों का चित्रण उसमें है। (भूमिका 5)

यदि कोई व्यक्ति दलित साहित्य को नहीं पढ़ता है, तो वह दलितों की दयनीय स्थिति को देखकर कुछ अधिक नहीं सोच पाता है। सदियों की रूढ़ियों ने उसके मस्तिष्क में जो छायाचित्र बनाया है, वह उसे कुछ भी सोच विचार का अवसर नहीं देती, परन्तु वही व्यक्ति जब दलित साहित्य पढ़ता है तो उसे दलितों की इस सामाजिक स्थिति तथा उन पर हुए सामाजिक अत्याचारों और अन्यायों का पता चलता है। उसे पता लगता है कि दलित भी उसकी तरह ही हाड़–मांस के जीवित प्राणी हैं, उनकी भी भावनायें हैं और ये भावनायें आहलादित और आहत भी होती हैं। दलित साहित्य का पाठक इस साहित्य को पढ़ने के पश्चात एक यात्रा प्रारम्भ करता है, उसके अन्दर की यात्रा, उसके अन्तर्मन को कचोटने लगती है। उसे अपनी अन्तर्रात्मा की वाणी सुनाई देने लगती है कि समाज ने दलितों के साथ अन्याय किया है। यह बोध होते ही उसके अन्तर्मन में परिवर्तन प्रारम्भ होता है। व्यक्तियों से मिलकर ही समाज का निर्माण होता है। व्यक्ति में परिवर्तन प्रारम्भ होते ही समाज का भी परिवर्तन प्रारम्भ होता है। यह कार्य केवल साहित्य ही कर सकता है क्योंकि लेखक के दिल के अन्दर झांकने की साहित्य ही परिवर्तन की एक खिड़की है। एक बार जब व्यक्ति इस खिड़की से अन्दर झांक लेता है तो परिवर्तन अवश्यंभावी हो जाता है।

शरण कुमार लिंबाले की कहानी ''गणपति बप्पा मोरया'' पाठकों को इसी तरह का एक अवसर प्रदान करती है। यह कहानी एक दलित और एक ब्राह्मण की मित्रता के बारे में है। परन्तु रूढ़ियों में जकड़ा हुआ हिन्दू समाज इस मित्रता को स्वीकार नहीं करता और समाज का प्रत्येक व्यक्ति यह प्रयास करता है कि यह मित्रता टूट जाये। कहानी के एक प्रसंग में एक झगड़े में समीर जोशी के हाथ में चाकू का घाव लग जाता है तो लोग उसे भड़काते हुए कहते हैं :

> म्हार के साथ रह कर तू भी म्हार हो गया। अरे हज़ारों वर्षों से म्हार और ब्राह्मण का बैर है। शायद यह कारस्तानी लिंबाले ने रची होगी। गुंडे ने उसे चाकू नहीं मारा, तुझे ही क्यों मारा? अरे, तू ब्राह्मण है इसलिए उसने तेरा कांटा निकालने की ठानी होगी। समीर जोशी

> के परिवार में ऐसी चर्चा थी। ऐसे अनुभव होते ही हैं। कुछ भी बुरा होते ही सभी को मेरी हल्की जात दिखाई देती। मैं भी चिढ़ता, तिलमिलाता, पर जात थोड़े ही बदली जा सकती है। (11)

ऊपरलिखित पंक्तियों से साफ है कि लिंबाले के बारे में निर्णय उसके चरित्र के आधार पर नहीं अपितु उसकी जाति के आधार पर लिया जाता है। समाज में इस तरह की भ्रान्तियाँ आज भी व्याप्त हैं जिसमें कुछ दुर्गुणों को केवल एक जाति के साथ जोड़ दिया गया। शरण कुमार लिंबाले की इस कहानी को पढ़ने के बाद समाज का दोहरापन उजागर होता है।

लिंबाले लिखते हैं – ''समीर जोशी का व्यवहार मैं देखता था। मेरा धर वह संभालता था। हमारे बीच कभी जात–पात आड़े नहीं आई।''(11)

इस कहानी के माध्यम से हमें पता लगता है कि समाज में प्रचलित इन रूढ़ियों के क्या नुकसान हैं और इन रूढ़ियों को क्यों नष्ट किया जाना चाहिए। इन रूढ़ियों का नष्ट करना इसलिए आवश्यक है क्योंकि अगर इन्हें नष्ट नहीं किया गया तो कुछ लोग इनकी वजह से ऐसे प्रताड़ित होते रहेंगे। इन लोगों को इनके व्यक्तित्व के आधार पर नहीं अपितु किस जाति में ये जन्मे हैं, उसके अनुसार उनके चरित्र का निर्धारण किया जाता है। अर्थात आप किसी व्यक्ति को इस आधार पर नहीं परखते जो हमें नज़र आता है अपितु उस आधार पर करते हैं जो कि सदियों पूर्व निर्धारित कर दिया गया था। बाबा साहब अम्बेडकर ने भी इसी आधार पर चातुर्वर्ण्य व्यवस्था का विरोध किया।

सदियों पूर्व कैसे किसी व्यक्ति की आजीविका को उसकी जाति के साथ अथवा जन्म के साथ निर्धारित किया जा सकता है आदि–आदि। दलित साहित्य इसी बात का विरोध करता है। इसी कारण कहा गया है कि दलित साहित्य अन्य साहित्यों से भिन्न है :–

> दलित साहित्य वैयक्तिक न होकर समूह का साहित्य है। विद्रोह, संघर्ष, जागृति की भावना को तीव्रतर करना ही दलित लेखन का उद्देश्य रहा है। अर्थात नकार तथा विद्रोह के मूल्यों को दलित साहित्य ने सामाजिक परिवर्तन के लिए स्वीकारा है। (भूमिका 5)

इस विद्रोही, क्रान्तिकारी साहित्य के पीछे बाबा साहब के संघर्ष का, उनकी प्रखर बुद्धि और उनकी साधना की ही प्रेरणा रही है। इस कारण बाबा साहब की प्रेरणा दलित साहित्य में सर्वत्र दिखाई पड़ती हैः–

> सदियों से तीन वर्णों की सेवा करना – यही एकमात्र काम करते रहने वाले दलित अब आत्मजागृति के कारण अपने नरक समान जीवन के बारे में भी सोचने लगे और अपना साहित्य रचने लगे। इस परिवर्तन के पीछे मात्र डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर के विचार हैं, अर्थात बाबा साहब अम्बेडकर के मुक्ति संग्राम के साथ–साथ दलित कविता और कहानी भी जन्म लेती है। मराठी के प्रस्थापित कलावादी साहित्यकारों ने दलित साहित्य का विरोध किया और कहा कि यह साहित्य प्रचारवादी है। कलात्मकता का प्रत्यय देना दलित साहित्य का उद्देश्य भी नहीं। दलित साहित्य वस्तुतः समाज को दिशा देने का काम करता है। (भूमिका 5)

बाबा साहब का आह्वान है – पढ़ो, संगठित हो, संघर्ष करो। यह आह्वान समूचे दलित साहित्य में गुंजायमान होता है। शिक्षा आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है और समाज द्वारा थोपी गयी यह पारम्परिक आजीविका कमाने वाले साधनों को छोड़ देने के लिए प्रेरणा देती है। वामन राव बागुल की कहानी में बेटा यही बात अपने पिता से कहता है – ''पिता जी, जो भी हो जाय, मैं पढ़ाई नहीं छोडूंगा। मुझ पर लादी हुई यह नौकरी मैं नहीं करूंगा। बावजूद इसके शिक्षा पूरी होने पर सॉव्रेल्स जैसा बुद्धिमान होकर इस अमानवीय रूढ़ि–प्रथाओं का, अस्पृश्यता का समूल नाश करूंगा।''(15)

इस कहानी में दो पीढ़ियों की सोच में अन्तर साफ–साफ दृष्टिगोचर होता है। पिता पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करता है जो कि अपने ''पारम्परिक काम'' को अपनी किस्मत मान कर चुपचाप रह जाते हैं और इन परम्पराओं का विरोध नहीं करते। पिता उन लोगों में से है जो संघर्ष को व्यर्थ समझते हैं और अमानवीय व्यवहार को अपना भाग्य मान कर चुपचाप सहते हैं। ऐसे लोगों के बारे में ही प्रसिद्ध कन्नड़ उपन्यासकार यू.आर. अनन्तमूर्ति लिखते हैं :–

> अगर मुझसे पूछा जाये कि भारतीय सभ्यता में सबसे बुरा क्या है तो मैं निःसंकोच उत्तर दूँगा : अस्पृश्यता। मैं दासता समझ सकता हूँ :– एक दास लड़ सकता है परन्तु अस्पृश्यता अर्न्तमन तक, अन्तर्रात्मा तक पैठ कर जाती है और मनुष्य धीरे–धीरे यह महसूस करने लगता है कि वह सचमुच अस्पृश्य है। (x)

पिता इसी भावना से ग्रस्त है। परन्तु बेटा बाबा साहब का अनुयायी है, उसे पढ़ाई का महत्त्व पता है। वह जानता है कि पढ़ाई पारम्परिक काम से उसका पीछा छुड़वा सकती है। वह स्वभाव से विद्रोही हॅ, बाबा साहब की साधना का फल, मेहनत का फल, बेटे के उत्तर में दृष्टिगोचर होता है :–

> केवल इस कारण मेहतर बनूँ? पढ़ाई छोड़कर पूरे गाँव की गंदगी निकालता रहूँ। ढोता रहूँ। मुझे मेहतरी ही करनी थी तो स्कूल में क्यों भेजा था? मेरे मन में स्वाभिमान के, ज्ञान के, मानवता के दीप क्यों जलाए?

बेटे के जवाब से साफ है कि बाबा साहब ने जो जीवन पर्यन्त संघर्ष किया, वह विफल नहीं हुआ। उनके संघर्ष से समाज जागृत हुआ है। वह लोग जो सदियों से

दमन चक्र में जकड़े हुए थे, उन्हें एहसास हो गया है कि वे भी मनुष्य हैं। समरस समाज की ओर यह पहला कदम है।

एक बात ध्यान देने योग्य है कि जातिवाद का दंश केवल हिन्दू धर्म में नहीं है, यह दूसरे धर्मों में भी है। कई लोगों ने जाति के दमन से बचने के लिए पंथ बदल लिया। उन्होंने इस्लाम व इसाईयत का सहारा लेने का प्रयास किया, परन्तु जाति चक्र ने इन लोगों का वहां भी दामन नहीं छोड़ा। इस विषय में समाजशास्त्री श्रीनिवास लिखते हैं :–

> कई कथित नीची जाति के लोगों ने धर्म परिवर्तन किया और इस्लाम और इसाईयत में चले गये। कुछ लोगों ने सिख पंथ और आर्यसमाज का सहारा लिया। ऐसा अधिकतर पंजाब और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में हुआ, जहाँ लोग जाति के कलंक से छुटकारा चाहते थे। परन्तु इन लोगों को परिवर्तन के पश्चात् विदित हुआ कि जाति से छुटकारा पाना इतना सरल नहीं है, जाति ने इन लोगों का पीछा इनके नये पंथों में भी नहीं छोड़ा। भारत में इस्लाम ओर इसाईयत पर जाति की छाप साफ–साफ नज़र आती है। (80)

ऊपरलिखित पंक्तियों से साफ हो जाता है कि धर्म या पंथ बदलना जाति के कलंक से मुक्ति का कोई रास्ता नहीं है। जाति की छाप पाकिस्तानी समाज पर भी साफ–साफ दिखाई पड़ती है जहाँ चलचित्रों के नाम भी जातियों पर रखे जाते हैं। उदाहरणार्थ ''बदमाश गुज्जर'', ''जट्ट इन लंदन'', ''जट्ट दा खड़ाक'' ये कुछ प्रसिद्ध पाकिस्तानी चलचित्रों के नाम हैं।

मत परिवर्तन करने वाले लोगों को भी समाज में सम्मान पाने के लिए बाबा साहब के मूलमन्त्र की आवश्यकता पड़ी। बाबा साहब का मूलमन्त्र ''पढ़ो'' इन लोगो की भी समझ में आ गया। आज का दलित साहित्य पढ़ने पर पाठकों को एहसास हो जाता है कि बाबा साहब कितने दूरदर्शी थे। उन्होंने अपनी दूरदृष्टि से यह जान लिया था कि जाति के दमन के विरुद्ध सबसे सशक्त हथियार एकमात्र शिक्षा ही है। शिक्षा एक ऐसा हथियार है जो न केवल व्यक्ति को रूढ़ियों से मुक्त करती है, बल्कि उसे एहसास कराती है कि वह भी एक स्वतन्त्र व्यक्ति है और अपने भाग्य का निर्माण स्वयं कर सकता है। शिक्षा उसके भाग्य को परिवर्तित कर सकती है। इस विषय में बामा फोस्टीना की आत्मकथा करूक्कू एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक है।

बामा के पूर्वजों ने भी जाति की विषमता से बचने के लिए ईसाई पंथ अपनाया। परन्तु जाति के दंश ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। बामा अपनी आत्मकथा में ननों के पूर्वाग्रहों को उजागर करती हैं। यह आत्मकथा इसलिए आवश्यक है क्योंकि ईसाई मत में पादरियों और ननों को देवदूत समझा जाता है, परन्तु यहाँ तो देवदूतों का मन ही मैला है, प्रदूषित है :

> हम इन लोगों को अपने घरों में कैसे घुसने दे सकते हैं और अगर हम इन्हें घुसने दे भी देते हैं तो ये स्वयं हमारे घरों में नहीं घुसेंगे क्योंकि इन्हें अपना स्थान पता है। हम इन जीवों के लिए कुछ नहीं कर सकते। और हमें इनके लिए कुछ करना भी नहीं चाहिए। क्योंकि इनकी मदद करने का अर्थ – नाग को दूध पिलाना होगा। अगर हम इन लोगों के लिए कुछ करते भी हैं तो भी ये आगे नहीं बढ़ सकते। ये लोग ऐसे ही हैं। आजकल लोग ऐसे कपड़े पहन कर निकलते हैं कि कभी–कभी इन लोगों को पहचानना भी मुश्किल होता है। (100)

बामा को नन की ये बातें सुनकर एहसास हो जाता है कि चर्च में जातिवाद चरम पर है। इस कान्वेंट से बामा का मन खट्टा हो जाता है और उसे यह एहसास हो जाता है कि इसाईयत का यह दावा कि वहाँ सभी वर्ग एक समान हैं, यह केवल एक मनघड़न्त बात है। अपनी आत्मकथा में बामा भी बाबा साहब अम्बेडकर के साथ सहमत होते हैं कि सामाजिक सम्मान शिक्षा से ही प्राप्त हो सकता है। बामा का भाई उन्हें बताता है :–

> क्योंकि हम पराया जाति में जन्मे हैं, इसलिये हमें कभी भी सम्मान नहीं मिलता है। हमसे सम्मान छीन लिया गया है। परन्तु यदि हम पढ़ते हैं और आगे बढ़ते हैं तो हम इन अपमानों से छुटकारा पा सकते हैं। इसलिए ध्यान से पढ़ो, जितना पढ़ सकते हो उतना पढ़ो। अगर आप पढ़ाई में दूसरों से आगे रहते हो तो लोग स्वयं आकर आपसे पूछेंगे और आपके साथ जुड़ेंगे। इसलिए मेहनत करो और सीखो।

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट होता है कि बामा की समझ में बात आ जाती है कि शिक्षा ही सम्मान का पर्याय है। बिना शिक्षा के सम्मान नहीं मिलेगा। एक शिक्षित व्यक्ति की जाति उसकी शिक्षा की चमक में खो जाती है और ऐसे व्यक्ति की उपलब्धियों के समक्ष समाज नतमस्तक होता है।

निष्कर्ष

अतः यह बात कही जा सकती है कि बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर एक ऐसे ज्योतिपुन्ज, सामाजिक दूरद्रष्टा और ऐसे महामानव थे, जिन्होंने चातुर्वर्ण्य समाज व्यवस्था की गहराई से विवेचना की। सम्भवतः उन्होंने अनुभव कर लिया था कि हिन्दू समाज में स्थापित जाति प्रथा को समाप्त नहीं किया जा सकता परन्तु इसे लांघा अवश्य जा सकता है। शिक्षा वह शस्त्र है जिससे बड़े से बड़ा युद्ध जीता जा सकता है। बाबा साहब से प्रेरणा लेकर दलित साहित्य न केवल दलितों को शिक्षा देने एवं उनमें संगठन की भावना भरने के लिए प्रेरित कर रहा है, अपितु समस्त जनों में एक सहानुभूति पैदा करने का काम भी कर रहा है जिससे समाज में फैली कटुता और सामाजिक विषमता कम हो रही है और समाज

समरसता की ओर अग्रसर हो रहा है। शिक्षा ज्ञान का वह सूर्य है जिसकी अग्नि में सारे जाति भेद जल कर राख हो जायेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची

सिन्हा, गोपाल शरण और रमेश चन्द्र सिन्हा, ''एक्सपलोरेशन इन कास्ट स्टीरीयोटाईपस'' सोशल कौर्सेज, 167, सितम्बर 46. 1 : 42–47

सिंह, मधुकर और संजय नवले, ''भूमिका'', मराठी दलितम कहानियाँ, रचनाकार प्रकाशन, दिल्ली, 2015

लिंबाले, शरणकुमार, ''गणपति बप्पा मोरया'' मराठी दलित कहानियाँ, रचनाकार प्रकाशन, दिल्ली, 2015

पोर्टर, जे.एच., ''कास्ट इन इंडिया'' अमरीकन एंन्थरोपोलोजिस्ट 8.1, 23–30

आबेड़कर, बी.आर., ''एनाहेलेशन आव कास्ट'', नवायन, नई दिल्ली, 1936

जुलूरी, वामसी, ''रीआर्मींग हिन्दुईज्म वैस्टलैंड, चेन्नई, 2015

अनन्तमूर्ति, यू.आर., ''आथर्स नोट'' यू.आर. अनन्तमूर्ति, भारतीपुरा अनुवाद सुशीला पुनीता, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रैस, नई दिल्ली, 2010

श्रीनिवास, एम.वी. विलेज कास्ट, जैन्डर एण्ड मैथड़, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रैस, नई दिल्ली, 1999

बामा करक्कू अनुवाद लक्ष्मी होलमस्टरोम, मैकमिलन, चेन्नई, 2000